Samanjasya सामंजस्य **Volume 01, Number 01, 2024**
ISSN: 3049-3269 (Online) **Page Number: 56 - 65**

झारखंड का हिन्दी साहित्यः रचना एवं रचनाकार विमर्श विशेष

चेतन आनन्द[1], §

शोध सारः साहित्य का सीधा संबंध जन चेतना से है। साहित्यकार की लिखी रचनाएँ भविष्य में अक्सर घटित होकर समीचीन हो जाती हैं। झारखंड की लेखिका ने एक उपन्यास लिखा था, 'मैं बोरिशाइल्ला'। बांग्लादेश की मुक्तिगाथा पर आधारित यह उपन्यास सत्ता के होड़ में धर्म के नाम पर अत्याचार को दिखाता है। वर्तमान में घटी घटना भी उसी धर्मांधता और दरिंदगी को दर्शाता है। सिर्फ समय और सोच बदला है। नीलांबर-पीतांबर, बिरसा मुंडा, सीदो—कान्हु की स्वतंत्रता आंदोलन में भूमिका, दामीन में छुपा स्त्री विमर्श का दर्द, रमणिका गुप्ता के स्त्री मुक्ति के प्रश्न, मैत्रेयी की पात्रों का स्त्री विमर्श के प्रतिरोध की दस्तक, सरल भाषा में ही पर समस्यामूलक अवधारणाओं पर झारखंड विशेष के साहित्यकारों की पैनी नज़र का अवलोकन विचारणीय है। स्त्रियों की आज़ादी, आधुनिक सोच और स्वच्छंदता के नाम पर शोषण का शिकार होने का डर, इन सब के बावजूद जीवन के विविध क्षेत्र में आगे बढ़ने की होड़, रचनाकार का धर्म होना चाहिए। समाज के हाशिये पर खड़े वर्ग का विमर्श के केंद्र में आना आज के साहित्य का धर्म और रचनाकारों का कर्म होना चाहिए। क्रांति जनमानस में कुछ अद्भुत करने की प्रेरणा देती है। 1857 की क्रांति में अंग्रेजों के छक्के छुड़ाने वाले नीलांबर-पीतांबर, संविधान सभा के अध्यक्ष रहे अमित कुमार घोष, यदुवंश सहाय जैसे अनेक नाम स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़े हैं। सामान्य से कद काठी परन्तु अद्भुत जिजीविषा के धनी पलामू के क्रांतिकारियों ने स्वतंत्रता संग्राम में अपनी सक्रिय भूमिका निभाई है। परन्तु अफ़सोस इनके शहादत की कोई विशेष चर्चा नहीं हो सकी। चंद्रशेखर आजाद के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने वाले गणेश वर्मा, वाराणसी में फाँसी का फंदा चूमने वाले स्वामी सत्यानंद, अगस्त क्रांति में अहम भूमिका निभाने वाले छह भाईयों की जोड़ी, इन सब का संबंध पलामू की धरती से रहा है। प्रदेश में भाषाओं की विविधता अनेकता में एकता का संदेश देता है। भारतीय सांस्कृतिक विरासत में यहाँ के लोकगीत और नृत्य की अपनी विशिष्ट उपस्थिती है। यहाँ के संस्कृति में वन संरक्षण, प्रकृति पूजन एवं संरक्षण का विशिष्ट संदेश है।

संकेत-सूचक शब्दः झारखंड का हिन्दी साहित्य, स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़े झारखंड के क्रांतिकारी, स्त्री विमर्श, रचना एवं रचनाकार विमर्श, अन्य विमर्श के साथ तारतम्य।

[1] इन्दिरा गांधी दिल्ली तकनीकी महिला विश्वविद्यालय, दिल्ली - 110006, भारत।
Email: chetan.igit@gmail.com

§ Manuscript received: 01-11-2024; accepted: 27-11-2024. Samanjasya, Volume 01, Number 01 © Zakir Husain Delhi College, 2024; all rights reserved.

मूल तथ्य

किसी भी भाषा का साहित्य वहाँ के परिवेश का प्रतिद्योतक होता है। हम जिस परिवेश और वातावरण में रहते हैं, वहाँ की सामाजिक, राजनैतिक, व वैचारिक पृष्ठभूमि स्वतः ही वहाँ के साहित्य में समाहित होती हैं। हम चाहते हुए भी किसी रचना में वहाँ के कथा परिवेश की अनदेखी नहीं कर सकते। अखंड भारत का एक ऐसा भूखंड जहां की नैसर्गिक प्राकृतिक सुरम्यता अनायास ही कुछ नया कर डालने की मानो निमंत्रण देती है। वन आच्छादित प्रदेश, जहां कल-कल बहती नदियाँ हैं, आम, महुआ, पलाश, केंदु-पत्ता, अपार खनिज सम्पदा युक्त धरती, कोयल (नदी) के किनारे और कोयल (पक्षी) की कूक सहज ही मन को मोह लेती हैं। ऐसे स्थान के वासी होने का गौरव जिसे प्राप्त हो, उसमे रचनात्मकता तो मानो उफान लेती है। यही कारण है कि यहाँ फ़ादर कामिल बूल्के, राधा कृष्ण किशोर, महाश्वेता देवी वर्मा से लेकर महुआ माजी, युवा रचनाकार अनुज लुगून जैसे अनगिनत रचनाकारों ने इसे अपना कर्मभूमि बनाया। मगही, भोजपुरी युक्त मिश्रित स्थानीय बोली के अलावा आदिवासी बहुल क्षेत्रों में नागपुरी का प्रचलन ज़ोरों पर है। आर्थिक पिछड़ेपन और संघर्ष को चुनौति मान यहाँ का युवा वर्ग सतत प्रयत्न शील हो, अपनी पहचान बनाने में कतई पीछे नहीं। वर्तमान क्या, इसके पूर्व भी माननीय 'कार्तिक उरांव' जैसे प्रतिभा के धनी व्यक्तित्व को इस धरा ने जन्म दिया है, जिनकी बेमिसाल उपाधियाँ और उपलब्धि हम सबके लिए सदैव प्रेरणा-श्रोत रहेगा। भारत के स्वतंत्रता संग्राम में सीदो-कान्हु, नीलांबर-पीतांबर, बिरसा मुंडा जैसे सपूतों का बलिदान देश को सशक्ति प्रदान किया था उसी प्रकार इनकी विराट जीवन शैली आज की साहित्यिक रचनात्मकता की आधारशीला का कार्य कर रही है।

झारखंड के परिप्रेक्ष्य में साहित्यिक अवधारणा अपनी सरलता और सादगीपूर्ण रचनाधर्मिता के साथ अति महत्वपूर्ण सामाजिक-राजनैतिक मूल्यों के सम्मिलन के साथ यहाँ की समाज में व्याप्त कुरीतियों, अंधविश्वास एवं मौलिक आधारभूत समस्याओं पर प्रकाश डालती हैं, और उनके निराकरन का उपाय भी दर्शाती हैं। उदाहरण के तौर पर 'महश्वेता देवी' की एक महत्वपूर्ण उपन्यास है-**'जंगल के दावेदार'**। जिसमे 'महाश्वेता' ने झारखंड के कड़वे सच को बड़े बेबाकी के साथ उजागर किया है। इस उपन्यास में यहाँ के आदिवासी समाज, मजदूरी प्रथा की बेलगाम कुरीतियाँ, बंधुआ मज़दूरी और व्यवसायी वर्ग द्वारा अर्थ-तंत्र पर एकाधिकार, उनके इर्द-गिर्द घूमती सर्वहारा वर्ग की निर्भरता का कच्चा-चिट्ठा का व्यापक लेखा-जोखा मिलता है। कालाबाजारी के माध्यम से व्यवसायी वर्ग ने दूर देहात के सारे गाँव से 'नमक' जैसे मूलभूत पदार्थ को गायब कर दिया था। निर्भरता ऐसी कि मजदूरी के पश्चात रुपये के बदले नमक दिया जा रहा था। यह हाल पलामू जिले के तमाम क्षेत्रों में था, और डालटनगंज (आज का मेदिनीनगर) भी इससे अछूता नहीं। कैसी विडम्बना है, नमक के बिना जी नहीं सकते और नमक लेंगे तो पैसे नहीं मिलेंगे।

'मैं बोरिशाइल्ला'-महुआ माजी अर्थात *'मैं बोरिशाल का रहने वाला'* में महुआ माजी ने बोरिशाल क्षेत्र के उत्पीड़न को ऐतिहासिक दस्तावेज़ के रूप में सँजोया है। हालांकि कथ्य की दृष्टि से यह उपन्यास घटना प्रधान नीरस-सा भागता हुआ है, पर ऐतिहासिक दूरदर्शिता की दृष्टि से अत्यंत

महत्वपूर्ण है। 1948 से 1971 तक के कालखंड में पाकिस्तानी सैनिकों तथा उर्दूभाषी नागरिकों द्वारा सामान्य बांग्लादेशी नागरिकों पर हो रहे अत्याचार का बेखौफ चित्रण इस उपन्यास में समाहित है। आलोचकीय दृष्टि से देखा जाये तो रचना के प्रभाव के रूप में रहस्य का अभाव देखा जा सकता है, घटनाओं का फैलाव जिज्ञासा को कम करता है।[1]

झारखंड के उपलब्ध साहित्य पर अगर प्रकाश डाला जाए तो यहाँ के साहित्य को मोटे तौर पर तीन भागों मे बाँट सकते हैं।

1. **समस्यामूलक गद्य साहित्य**-रामचीज सिंह बल्लभ, राधाकृष्ण, फादर कामिल बुल्के, महाश्वेता देवी, महुआ माजी आदि।
2. **समस्यामूलक पद्य साहित्य**- राधाकृष्ण, सोमदेव आदि।
3. झारखंड के हिन्दी साहित्य कि **अन्य विधाएँ** यथा-व्यंग्य, प्रहसन, नाटक आदि।

जहां तक हिन्दी और शोध का प्रश्न है, झारखंड कतई पीछे नहीं बल्कि हिन्दी से संबन्धित प्रथम की श्रेणी में है। 'हिन्दी' में प्रस्तुत हिन्दी की प्रथम शोध कृति- फादर कामिल बुल्के कृत **'रामकथाः उत्पत्ति और विकास'** (1949 ई०) है। इस साहित्यिक परिचर्चा में अगर युवा रचनाकारों की अनदेखी की जाय तो यह कदाचित अनुचित होगा। हिंदुस्तान मीडिया.कॉम से कुछ चुनिन्दा लेखक, कवि, रचनाकार, व्यंग्यकार, स्तंभकार के नाम की चर्चा समीचीन होगा। अमरेन्द्र सुमन (लेखक), अशोक कुमार उजाला, अरुण लच्छीराम, अरुण कुमार सिन्हा (रचनाकार), डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी (प्रसिद्ध लेखक), डॉ. अमरेन्द्र कुमार सिन्हा (कवि), उमेश चन्द्र सिन्हा साधक (उपन्यासकार), उत्तीय सरकार (अँग्रेजी कवि), कैलाश केशरी (साहित्यकार), भुजेन्द्र आरत (साहित्यकार), रामधन चौबे (कवि), रघुनाथ चौबे (संगीतकार), डॉ० खीरोधर यादव (लेखक), डॉ० कुमार वीरेंद्र सिंह (समीक्षक एवं साहित्यकार), कु० रेणु भारती (मनोवैज्ञानिक लेखिका) आदि कई ऐसे नाम हैं जिन्होंने अपनी लेखनी में कुछ नया करने का व्रत लिया है।

पलामू के क्रांतिकारी पुस्तक में इन पर प्रभात मिश्र 'सुमन' ने पलामू के क्रांतिकारियों की गाथाओं पर अपनी तथ्यात्मक लेखनी चलाई है। 1942 के अंग्रेजों भारत छोड़ो आंदोलन में सक्रिय गणेश प्रसाद वर्मा की तलाश में डाल्टनगंज में स्थित बेलवाटिका चौक के पास स्थित खपरैल मकान को अंग्रेजी हुकूमत के सिपाहियों ने चारों ओर से घेर लिया। अक्तूबर का महीना, विजयादशमी का दिन, उन्हें आदेश था कि वे घर पर हीं होंगे। परन्तु सफलता नहीं मिली। सत्यपाल वर्मा, गणेश बाबू के बेटे हैं, कहते हैं "पिताजी अपनी फुआ को दीदी बुलाते थे। इसका कारण था कि वे कम उम्र में विधवा हो गई थीं और अपने मायके में रहती थीं। घर में सभी लोग उनको दीदी कहते थे। यही कारण था कि उनके भतीजे भी उन्हें इसी संबोधन से बुलाने लगे। वे काफी संघर्षशील महिला थीं। उन्हें गलत बात तनिक भी अच्छी नहीं लगती थी। उन्होंने अपने भतीजे को भी जुल्म के खिलाफ संघर्ष करने और गलत बात का विरोध करने की घुट्टी पिलाई थी।"[2] परिणाम यह हुआ कि गणेश बाबू क्रांतिकारियों के संपर्क में आए और अंग्रेजों के खिलाफ जंग में कूद पड़े। 19 अक्तूबर, 1942 को ठीक दशहरा के दिन

एड़ी-चोटी का जोर लगाने के बावजूद हुकूमत उन्हें गिरफ़्तार करने में असफल रही। बाद में एक भेदिए ने सूचना दी कि गणेश प्रसाद वर्मा शीला बाबू के बीड़ी पत्ता गोदाम में सोए हुए हैं। सूचना मिलने पर पुलिस अधीक्षक ने उन्हें बीमार हालत में ही गिरफ़्तार करके डाल्टनगंज जेल भेज दिया।

पुस्तकें भी क्रांति की आगाज हैं। "देखो मैं अपने रक्त से गुलामी की जंजीर को तर कर रहा हूं, ताकि तुम आसानी से उसे काट सको।" यह कथन महान क्रांतिकारी श्याम बर्थवार ने पलामू की पाटन थाना स्थित सूठा गांव निवासी स्वामी सत्यानंद वास्तविक नाम रामदेनी चौधरी के बारे में कहा था। बनारस जिला कैदखाने में उन्हें अंग्रेजी हुकूमत ने 26 मई, 1934 को फाँसी के फंदे पर चढ़ा दिया था। विश्वनाथ माथुर जिन्हें गया षडयंत्र में काला पानी की सजा हुई थी, के शब्दों में, "मुझे बनारस जेल में रखा गया था। बहुत प्रयास के बाद जेलर की मेहरबानी से फांसी सजायाफ्ता क्रांतिकारी स्वामी सत्यानंद से मुझे मिलने का मौका मिला। कालकोठरी में उनके विहंसते चेहरे को देख कर मैं दंग रह गया। मुझे देखते ही खुशी से नाच उठे। उन्होंने कहा कि मैं तो अब चला। लो, एक पका आम है खा लेना। पिताजी घर से लाये थे। क्या मेरा एक काम करोगे? इस पुस्तिका को श्यामजी (श्याम बर्थवार) तक पहुंचा सकोगे? उन्होंने मेरे हाथों में एक छोटे सी पुस्तिका रख दी, अंत में मैं अपने सेल में चला गया। दूसरे दिन प्रातः उन्हें फांसी के तख्ते पर ले जाया गया। स्वामी सत्यानंद इन्कलाब जिंदाबाद का नारा लगाते झूल गए। जेल के तमाम कैदियों के नारों से दिशाएं गूंज उठीं। एक और सेनानी शहीद हुआ। निश्चय ही वह भगत सिंह और चंद्रशेखर आजाद के गिरोह का एक वीर सेनानी था। मैंने स्वामी की अमानत श्याम बर्थवार के हवाले कर दिया।"[3]

झारखंड के हिन्दी साहित्य में 'स्त्री-विमर्श' की गति थोड़ी धीमी दिख पड़ती है। फिर भी महुआ माजी (पूर्व अध्यक्षा, झारखंड महिला आयोग), कल्याणी शरण (वर्तमान अध्यक्षा, झारखंड महिला आयोग) के सार्थक प्रयास प्रशंसनीय कदम हैं। इसी संदर्भ में 'आदिवासी समाज और स्त्री रचनाकार' विषयक संगोष्ठी का आयोजन काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी में 20 मार्च, 2017 को आयोजित हुआ। इसमें डॉ० महुआ माजी (पूर्व अध्यक्षा, झारखंड महिला आयोग) के अतिरिक्त प्रो० वीर भारत तलवार, प्रो० चंद्रकला वैद्य, प्रो० चम्पा सिंह, प्रो० अशोक सिंह, प्रो० राजकुमार, प्रो० नीरज खरे आदि ने अपने विचार रखे। स्त्री-विमर्श के ऊपर अभी 2018 में नीलांबर पीतांबर विश्वविदायलय के स्नातकोत्तर विभाग से पहला शोध **'मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा और उपन्यासों में राजनीति का स्वरूप-स्त्री-विमर्श की दृष्टि से'** सम्पन्न हुआ। वहीं दूसरा शोध प्रसिद्ध साहित्यकार राधाकृष्ण के ऊपर शोधार्थी डॉ. रामसनेही राम, शोध निर्देशक- डॉ० कुमार वीरेंद्र सिंह द्वारा सम्पन्न हुआ।

झारखंड के हिन्दी साहित्य में कई ऐसे नाम हैं जिनकी रचनाएँ यहाँ के साहित्येतिहास में मिल का पत्थर हैं। ऐसा हीं एक नाम है राम चीज सिंह बल्लभ जिनकी रचना 'राजपूती शान' को झारखंड का प्रथम उपन्यास का गौरव प्राप्त है। *हड़फ-हड़फ* (प्रहसन), *ललिता* (1909), *उमाशंकर* (1910), *जेबी कोश* एवं *मुहावरे* चर्चा में रहे। दूसरे महान साहित्यानुरागी हैं- राधाकृष्ण। राधाकृष्ण कहानीकार, उपन्यासकार, व्यंग्यकार एवं नाटककार के रूप में प्रखर पुरोधा थे। इन्हें प्रेमचंद के *हंस* के समय से लिखने का गौरव प्राप्त है। इनकी कहानियों में देश और समाज में व्याप्त, गहराई तक जड़ जमाये

कुरीतियों पर गहरा कुठाराघात देखने को मिलता है। जन्म और कर्मभूमि रांची होते हुए राधाकृष्ण जी ने *सजला, रामलीला, गेंद* और *गोल गल्पिका* जैसी कहानियाँ और *फुटपाथ, बोगस, सनसनाते सपने* (उपन्यास), *चन्द्रगुप्त की तलवार* (व्यंग्य), *भारत छोड़ो, बिगड़ी हुई बात* (नाटक) जैसे अनमोल साहित्यिक कृति दिये।

मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ-महुआ माजी, *घेरे के बाहर* (उपन्यास) - द्वारिका प्रसाद, *ग्रह का फेर* (नाटक) - अनंत सहाय अखौरी, संथाली साहित्य का प्रथम नाट्य *'बिंदुचन्द्र'* - रघुनाथ मुर्मू, *नागवंशावली* - बेनिराम महथा, संथाली साहित्य के पुरोधा - डोमन साहू समीर, *पासी खातीर* (2015 का साहित्य अकादमी पुरस्कार विजेता) - रवियतल टुडु, *देशर कथा* - गणेश दिवस्कर, *स्वराज्य लूट गया* - बाबू राम नारायण सिंह, वर्ष 2016 के पद्मश्री अवार्ड विजेता-जुएल लकड़ा (प्रथम आदिवासी) के नाम की अनुवृति अनिवार्य है।

झारखंड के साहित्येतिहास में 'फादर कामिल बुल्के' एक चीर परिचित नाम है। इनकी उपलब्धियाँ हिन्दी और गैर हिन्दी दोनों अनुरागियों के लिए सदैव प्रेरणा श्रोत रहेंगे। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से 1947 में एम०ए० (हिन्दी) तथा *रामकथाः उत्पत्ति और विकास* विषय पर डी०फिल० की उपाधि प्राप्त की। जन्म 1 सितंबर 1909 को बेल्जियम के पश्चिम में स्थित फ्लैन्डर्स प्रांत के रम्सकपेल गाँव में हुआ था। अभाव और संघर्ष को अपना हमसफर बनाते हुए कई स्थानों को अपना अध्ययन क्षेत्र बनाया। वर्ष 1930 में लूवेन विश्वविद्यालय से इंजीनियरिंग की पढ़ाई पूरी की। लैटिन भाषा पढ़ने एवं सन्यासी जीवन बिताने के उद्देश्य से भारत में आगमन ने उन्हें सोचने और कुछ नया करने का नज़रिया दिया। संत जोसफ कॉलेज, दार्जिलिंग में विज्ञान के अध्यापक रहे और 1941 में पुरोहित बने। येसु संधियों के मुख्य निवास स्थान मनरेसा हाउस, रांची में रहे। 1950 से 1977 तक संत ज़ेवियर कॉलेज, रांची के हिन्दी-संस्कृत विभाग के विभागाध्यक्ष रहे। इनकी प्रमुख कृतियों में रामकथा और तुलसीदास, मानस-कौमुदी, अंग्रेज़ी-हिन्दी-शब्दकोश आदि हैं। वर्ष 1974 में इन्हे पद्मभूषण सम्मान से सम्मानित किया गया। [4]

झारखंड की माटी ही ऐसी है जहां रग-रग में साहित्य बसता है। कुछ नया कर डालने की स्फुरना स्वतः ही उफान पर होती है। मन में कोई मलाल नहीं, जो उपलब्ध साधन है उसी को आधार बनाया और चल पड़े अपने मंजिल की ओर, फिर वो चाहे साहित्य रचना हो या कर्म-क्षेत्र, मानो हार न मानने की ठान ली हो।

ऐसे ही एक युवा साहित्यकार, समालोचक एवं स्तम्भकार हैं- डॉ० कुमार वीरेंद्र सिंह। संभवतः उनके नाम से बहुत सारे लोग यहाँ परिचित होंगे, लेकिन उनके साहित्यिक जीवन का परिचय संभवतः सबके पास नहीं होगा। बात जब अपने साहित्यिक परिवेश की हो तो इनकी चर्चा तथ्यगत रूप में आवश्यक होगा। डॉ० कुमार वीरेंद्र सिंह संप्रति इलाहाबाद विश्वविद्यालय में 'प्रोफेसर' के पद पर पदासीन हैं। इलाहाबादी गुरु-शिष्य परंपरा के धनी प्रोफेसर सिंह की एक नवीन पुस्तक समीक्षा - *'छायावाद्युगीन कविता पुस्तक समीक्षा'* पढ़ने का मौका मिला। पढ़ने के बाद इस निर्णय पर पहुंचा कि

हिन्दी अनुरागियों के लिए यह एक महत्वपूर्ण पुस्तक साबित होगी। प्रोफेसर सिंह का संक्षिप्त जीवन परिचय समीचीन जान पड़ता है। जन्म बिहार के कुटुंबा प्रखण्ड, औरंगाबाद जिले के झरहा गाँव में 20 दिसम्बर 1974 को हुआ। स्नातक से डी०फिल० तक की शिक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय से पूरी करते हुए विगत 22 वर्षों से निर्बाध हिन्दी साहित्यसेवा करते रहे हैं। इसके पूर्व डीजल रेल इंजन कारख़ाना भारतीय रेल, वाराणसी के राजभाषा विभाग में राजभाषा अधिकारी के तौर पर हिन्दी के प्रचार-प्रसार का कार्य, तकरीबन चार साल तक नीलांबर पीतांबर विश्वविद्यालय के पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग के प्रभारी के तौर पर, विगत आठ वर्षों से इसी विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग मे अध्यापन का कार्य किया। 'सामान्य हिन्दी' व 'अमृत राय : चिंतन और सृजन, छायावादयुगीन कविता पुस्तक समीक्षा के लेखन सहित राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में साहित्यिक, सामयिक, सामाजिक आलेख प्रकाशित। कहे बिन रहा न जाय, चलते-चलते तथा बतंगड़ शीर्षक से स्तम्भ लेखन, 'इस्पातिका' एवं 'सुबह की धूप' पत्रिका के संपादक मण्डल एवं अन्य क्रियाकलापों, ‘बतकही’ में सक्रिय उपस्थिति।[5]

झारखंड के हिन्दी साहित्य में पलामू के निवासी और यहाँ की धरती को रचना-क्षेत्र बनाने वाले कई महत्वपूर्ण नाम हैं, जिनमे कुछ ख़ास नाम हैं-जगदीश्वर प्रसाद (27 पुस्तकें प्रकाशित), मनमोहन पाठक (गगन घाटा घहराहीं), राकेश कुमार सिंह आदि। अक्सर यह देखा जाता है कि झारखंड का नाम आते हीं सरलता से आदिवासी लेखक के चुनिन्दा नाम सामने आते हैं। अनुज लुगून से लेकर निर्मला पुतुल तक। लेकिन गैर आदिवासी लेखकों का एक बड़ा तबका आदिवासी को केंद्र बनाकर झारखंड के हिन्दी साहित्य में निरंतर रचनानुप्रेरित हैं। ऐसे रचनाकार तथा अन्य विधाओं को आगे बढ़ाने वाले प्रमुखता से अपनी भागीदारी निभा रहे हैं। ऐसे ही लेखक, आलोचक-समालोचक में श्री विद्याभूषण, श्री अशोक प्रियदर्शी, डॉ० राहुल कुमार सिंह, रणेन्द्र आदि कई महत्वपूर्ण नाम हैं। कई ऐसे रचनाकार हैं जिनकी साहित्यिक उपलब्धियों को झारखंड के साहित्य में उचित स्थान मिलना चाहिए। एक ऐसे हीं पलामूपुत्र उपन्यासकार, कथा लेखक एवं बाल साहित्य के रचनाकार हैं- राकेश कुमार सिंह। इनकी रचना की गहराई और उत्कृष्टता-विशेषता का अंदाजा इन्हें पढे बिना लगा पाना बड़ा मुश्किल है। तथ्यगत अवधारणाओं को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य एवं आदर्शोन्मुख यथार्थवादी जामा पहनाने एवं रुचिकर सरलता से पाठकों के सामने रखना इनकी विशेषता है। इनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं-**उपन्यास(6)**-पठार पर कोहरा (2003, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन), जहां खिले हैं रक्त पलाश (नेशनल पब्लिशिंग हाउस-2003), जो इतिहास में नहीं है (भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन-2005), साधो यह मुर्दों का गाँव (नेशनल पब्लिशिंग हाउस-2008), हुल पहाड़िया (सामयिक प्र०-2012), महाअरण्य मे गिद्ध (भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन-2015), **कहानी-संग्रह(6)**-हाका तथा अन्य कहानियाँ (आलेख प्रकाशन, नई दिल्ली), ओह पलामू ... (आलेख प्रकाशन, नई दिल्ली), जोड़ा हारिल की रूप कथा (भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन), महुआ मांदल और अंधेरा (माधव पब्लिकेशन, नई दिल्ली), कहानी खत्म नहीं होती (भावना प्रकाशन-2017), तमस कोहरा और ... शिल्पायन (2018), **बाल- साहित्य (6)**- अवशेष कथाएँ, अरण्य कथाएँ, कहानियाँ ज्ञान विज्ञान की, आदि पर्व ... बिरसा मुंडा, अग्नि-पुरुष ... बिरसा मुंडा, उलगुलान (आलेख प्रकाशन, नई दिल्ली)।

समाज के महत्वपूर्ण इकाई के रूप में कंधे से कंधा मिलाकर चलने वालों में झारखंड की स्त्री समुदाय कतई पीछे नहीं। चाहे साहित्य रचना हो, देश की आज़ादी संघर्ष हो अथवा आदिवासी विद्रोह, सबमें इनकी भूमिका अहम रही है। यह बात दीगर है कि समाज के चाटूकारों ने इनके मार्ग में भी खूब रोड़े अटकाए हैं। झारखंड के साहित्यिक अवदान में कुछ चुनिन्दा स्त्री रचनाकारों की रचनाओं एवं कृतियों की चर्चा अनिवार्य जान पड़ती है। उनमें से कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं- निर्मला पुतुल- *झारखंडी महिलाओं का पलायन एवं उनका यौन-शोषण* (अनुवादक-अशोक सिंह), डॉ॰ रोज केरकेट्टा- *सत्ता और संस्कृति में आदिवासी महिलाएं*, बिटिया मुर्मू-*आदिवासी बेटियों का संपत्ति पर अधिकार का सवाल*, दमायनी बारला- *समाज का आखिरी आदमी* और स्त्री जनगोलबंदी *तेज करें* स्त्री-विमर्श की दृष्टि से झारखंड के हिन्दी साहित्य में रमणिका गुप्ता एक विशिष्ट स्थान रखती हैं। कई महत्वपूर्ण पुस्तकों का लेखन-सम्पादन में अति-विशिष्ट हैं। अनामिका-प्रिया ने तो 'झारखंड का हिन्दी कथा साहित्य' नामक पुस्तक ही रच डाला। स्त्री विमर्श की दृष्टि से चैतन्य संप्रदाय से एक उदाहरण का आकलन समीचीन होगा।

"माधवीदासी संत चैतन्य देव की शिष्या थी, जो उसके साथ रहती थी। उसने उड़िया और व्रज में कविताएं की। हरिदास ने अपनी किताब *'गौड़िया वैष्णव अभियान'* में लिखा है कि माधवीदासी ने जगन्नाथ भगवान पर एक संस्कृत नाटक *'पुरुषोत्तमम् देव नाटकम्'* तैयार किया था। यदि उसका कहना ठीक है तो वही एकमात्र भारतीय स्त्री-नाटककार है, जिसने भक्ति आंदोलन की परम्परा में एक संस्कृत नाटक सृजित किया है।"[6] यद्यपि चैतन्य संप्रदाय में स्त्री विरोधी मान्यताएं थीं, तथापि चैतन्य के जीवन में स्त्रीविरोध नहीं था।

वस्तुतः झारखंड के हिन्दी साहित्य में स्त्रियों की भूमिका के संदर्भ में पूंजीवादी व्यवस्था व पुरुष प्रधान सामाजिक संरचना ने उन्हें एक नया रुख अख़्तियार करने को मजबूर कर दिया है। या तो उनके पैर की पनही बन आगत परिस्थितियों से समझौता कर लें या फिर विद्रोह का रुख अख़्तियार कर लें। मैत्रेयी पुष्पा के *'अल्मा कबूतरी'* की भांति झारखंड का 'दामीन' भी एक ऐसा क्षेत्र है जिसे ब्रिटिश सरकार ने पहाड़िया जाती के लोगों के लिए सुरक्षित कर रखा था। एक नज़रिए से यह सही भी था और एक नज़रिए से गलत भी। अगर किसी विशेष लोगों को विशेष परिसीमा में बांध कर रखा जाय तो उनकी वैश्विक स्थिति कैसे पूर्णता प्राप्त करेगी? बहरहाल उनकी बढ़ती साहित्यिक अभिरुचि, सामाजिक सरोकार ने उन्हें एक नया स्वरूप प्रदान किया है। चूल्हा-चौकी, घर की चाहर-दिवारी के बाहर की दुनिया का उन्हें बखूबी अहसास है। समाज मे भागीदारी बढ़ रही है, और मज़े की बात यह कि पुरुष-प्रधान समाज ने उन्हें स्वीकारना शुरू कर दिया है। यही कारण है कि झारखंड के साहित्यिक-रचना योगदान में उनकी प्रबल उपस्थिती गौरतलब है।

एक बाद तो तय है कि ज़ुल्मो-सितम के इंतिहाँ को पार कर स्त्री-विमर्श ने स्त्री-स्वधिनता की एक नई परिभाषा गढ़नी शुरू कर दी है। जहाँ उनके खुद के अनुभव हैं जो उनके लिए कटु हो सकते हैं, पर आने वाली संघर्षशील पीढ़ियों के लिए प्रेरणादायक भी। अपने निजी अनुभवों को संघर्ष करती

खिलाड़ी, पर्वतारोही, अभिनेत्री, समाजसेविका, विमान परिचारिका, अभियंता, वकील, उच्च पदों पर आसीन स्त्रीशक्ति समाज के सामने अपनी सशक्तिकरण का पैगाम देती हैं। मैत्रेयी की सोच और अनुभवों के तर्ज़ पर कई नवोदित रचनाकार अपने वजूद की लड़ाई को रचना के माध्यम से समाज के सामने रख रही हैं। स्त्री-विमर्श को सीमा में बांध कर रखना कदापि उचित नहीं।

हरियाणा मूल की एक नवोदित खिलाड़ी रचनाकार 'अनुराधा बेनीवाल' अपने संघर्षों की गाथा से स्त्री-विमर्श के फ़लक पर अपनी उपस्थिती दर्ज कराती हैं। जहाँ अकेले होने के खतरे हैं, तो सुरक्षा का ध्यान भी। पर ऐसी सहूलियतें हौसला अफजाई में ज्यादा कारगर साबित होती दिख पड़ती हैं। अनुराधा ने अपने नितांत देसी अंदाज में अपनी पुस्तक *'आज़ादी मेरी ब्रांड'* में खेल जगत से जुड़े होने और बाहर निकलने के उम्दा अनुभवों का सरस जिक्र किया है।

"मैं तुम्हारा हाथ पकड़ कर नहीं ले जाऊँगी। तुम खुद हीं निकलोगी। मैं इस बात का यकीन भी नहीं दिला सकती कि सब अच्छा हीं होगा। फिर भी कहूँगी एक बात कि ये अनजानी गलियाँ, जहां तुम फिरोगी, टैम-बेटैम, बेकाम, बेवजह—तुम्हारे अपने घर से ज्यादा सुरक्षित होंगी।"[7]

स्त्री-स्वाधीनता और आज़ाद लड़की के बनाये नये रास्ते हमेशा कंटकाकीर्ण नहीं हुआ करते। लेकिन इसका मतलब यह नहीं की बड़े सुगम हैं। संघर्षों के राह पर चलकर स्त्री-स्वाधिनता के विमर्शकी दृष्टि से देखा जाये तो झारखंड की स्त्री विमर्श केन्द्रित रचनाओं का साम्य मैत्रेयी पुष्पा की रचनाओं से काफी मेल खाता है। शोध केन्द्रित उपन्यास *'कही ईसुरी फाग'* शोध में बढ़ रहे कुरीतियों का अपने पात्रों के माध्यम से बड़ी संज़ीदगी से खुलासा किया है।

ऐतिहासिकता और आधुनिकता का बड़ा रुचिकर खाका मैत्रेयी ने अपने इस उपन्यास में खींचा है। हर सूरत में स्त्री को आधार बनाकर उन्हीं के शोषण की कोशिश दिख पड़ती है। संभवतः इशारा लक्ष्मी बाई के दत्तक पुत्र और तत्कालीन कानून की ओर है। किसी के ऐतिहासिक पहलू को जाने बगैर वर्तमान का सही आकलन नहीं लगाया जा सकता। किसी के जैसा होने के लिए उसके तौर तरीकों की समझ आवश्यक है। शोधार्थी ऋतु को क्या वह सब करना पड़ेगा! जिसके बारे में उसने शायद सोचा भी न था। उसको करिश्मा बेड़िनी के सहयोग से खजुराहो के होटल में रुकने का मौका मिला था। रिसर्च के चक्कर में क्या ऋतु की उलझने बढ़ रही हैं? या यह मात्र एक स्त्री के हाशिये से केंद्र में आने की कोशिश है। पर इसके लिए क्या यह आवश्यक है जो ऋतु कर रही है? अब ऋतु करिश्मा के हवाले थी और रज्जो गंगिया के। बूढ़ी बेड़िनियों के भी नाचते हुए थकने का मतलब होता है रोजी-रोटी का छिन जाना।

"पलंग पर ही सामने बैठी थी मैं। उसने कॉलबेल बजाई। आकर तकिया गोद में रखकर फिर पलंग पर बैठ गई। बार-बार सिर पर हथेली लगाकर दर्द का अहसास जगाती थी, जिसके लिए मैं अपराधिनी की मुद्रा में आ जाती। शायद बेड़िनी के नखरे इन्हीं अदाओं को कहते हैं। मेरा मन था कि टीवी ऑन कर दूँ, मगर माधव से फोन पर हुई बात इसकी अनुमति नहीं देती।

बहरहाल बैरा वह सब ले आया, जो करिश्मा को चाहिए था। एक बोतल, दो गिलास और डोलची में बर्फ। साथ में खाने के लिए नमकीन सेब और प्याज।

मैं सारा समान देख रही थी और बोतल देखकर डर रही थी। कहीं करिश्मा पीछे पड़ गई तो क्या होगा? कभी पी नहीं। आज पीनी पड़ी तो मेरा क्या बनेगा? भाड़ में गई रिसर्च। लौट जाऊँगी कल ही।

वह ढालने लगी। मेरा पवित्र संयम थरथराने लगा। साथ ही जिज्ञासा भी कि पीकर देखा जाए, आखिर कैसा महसूस होता है?

दो गिलास बराबर-बराबर।"[8]

स्वाधीनता और अपनी आज़ादी के नाम पर अमर्यादित राह में बढ़ना न स्त्री विमर्श के हित में है और ना ही उसका उद्देश्य। हालांकि ऋतु पीने का नाटक करके पीती नहीं, पर क्या हर बार इस प्रकार बचाव संभव है? ये आधुनिक नारी की उलझनें हैं या उनका बदलता स्वरूप? आधुनिकता और वास्तविकता की ये कड़वी सच्चाईयां शहर से होते हुए गाँव की संस्कृति में भी प्रवेश कर रही हैं। समाज के ढर्रे से प्रभावित होती रही अब तक की स्त्रीत्व ना जाने कब अपने वजूद के आकार में समाने और आने की जिद ठान बैठा। जब कदम आगे बढ़े तो समाज ने चाहे-अनचाहे उनकी उपस्थिती का राजनैतिक लाभ उठाने में कोई कसर नहीं छोड़ी।

स्त्री सशक्तिकरण के विभिन्न आयाम और अपने बलबूते अपनी पहचान बनाती स्त्री की ओर मुखातिब हैं। सरस्वती देवी इसी क्रम में मीरासिंह की प्रेरणास्पद कहानी ऋतु को सुनाती हैं। मीरा कम उम्र की विवाहिता होते हुए अपने बलबूते पति के जगह खुद को शिक्षित कर विविध पारिवारिक बाधाओं से लड़ते हुए स्त्री सशक्तीकरण के नए पायदान चढ़ती जाती हैं।

"मगर इस स्त्री के लिये आंगनबाड़ी से सारा देश जुड़ गया, क्योंकि वह अब अपने बूते पर बाहर आ गई थी और उसकी हिम्मत देखकर महिला सशक्तीकरण की कार्यशालाओं से उसको बुलावा आता रहा था। इसी तरह वह गैर सरकारी संस्था से जुड़ी। जुडने के लिए जाहिर है की घर से, गाँव से और सम्बन्धों से छुटना था। यह सबसे कठिन मौका था, क्योंकि पति प्रताड़ना देने के सारे रास्तों से गुजरकर आत्महत्या तक आ गए थे। और वह छतरपुर आकर साइकिल चलाना सीख रही थी, अर्थात गति और तेज करने का अभियान ... "[9]।

निष्कर्ष

स्त्री-मुक्ति, स्वाधीनता, रचना जगत में उपस्थिती, हाशिये पर खड़े वर्ग का साहित्य एवं समाज के मुख्य धारा से जुड़ना जैसे प्रश्न रचनाकारों को नए आयाम प्रदान करते हैं। स्वाधीनता के नाम, अपनी आजादी के नाम पर अमर्यादित राह में बढना स्त्री आजादी के खतरे हैं। चिंताजनक यह है कि सोशल मीडिया ने प्रिंट मीडिया के भविष्य पर एक प्रश्न-चिन्ह खड़ा कर दिया है। बल्कि

अतिशयोक्ति न हो तो लेखन कौशल का जलवा तो विदेशी रचनाकारों की सर्वोच्च बिक्री पुस्तकों के रूप में देखा जा सकता है। इसका कारण संभवतः हिन्दी रचना के पाठक वर्ग हैं, जिन्हें अच्छी से अच्छी पुस्तक को भी पढ़ने का समय ही नहीं है। आवश्यकता है हिन्दी के पाठक वर्ग को जागृत हो कर हिन्दी का मान-सम्मान बढ़ाने और उचित प्रचार-प्रसार संवर्धन की जो भारत को पुनः विश्व–गुरु के शिखर पर स्थापित कर दे।

भारत के साहित्यिक पटल पर झारखंड की एक नवीन उपस्थिति आने वाले समय की संभावना है। हिन्दी के विकास में हिन्दी लेखन की ऑनलाइन सहूलियत ने फटाफट लेखकों की संख्या में अपार वृद्धि की है। नए सॉफ्टवेयर, हिन्दी लेखन की आधुनिक तकनीक ने निश्चित तौर पर नई उपलब्धियां प्रदान की हैं। इसे सकारात्मक रूप में प्रयोग में लाकर हिन्दी के बढ़ते कदम को झारखंड के हिन्दी साहित्य के अनुगामी के रूप में देखा जा सकता है। देश, समाज, पर्यावरण के प्रति जागरूकता उनकी लेखनी, पर्व-त्योहार, सरहुल, कर्मा, वनदेवी की पूजा, प्रकृति एवं संस्कृति के प्रति जागरूकता को दिखाता है। छोटे से प्रदेश में भाषाओं की विविधता अनेकता में एकता का संदेश देता है। झारखंड में हिन्दी, कुरमाली, खोरठा, पंचपरगनिया तथा नागपुरी जैसी भाषाएँ प्रचलित हैं, साथ ही कुडुख, पलमुआ, भोजपुरी-मगही मिश्रित बोली, खड़िया तथा मुंडारी आदि जनजातीय भाषाओं की अपनी अलग मनोहारी बानगी है। माँदल की थाप पर आदिवासी नृत्य मन को मोह लेता है तथा भारतीय सांस्कृतिक विविधता में एक विशिष्ट उपलब्धि दर्ज करता है।

श्रोत एवं संदर्भ

1. मैं बोरिशाइल्लाः महुआ माजी, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ संख्या-1,1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-02, भारत, ISBN: 978-81-2671-2052.
2. पलामू के क्रांतिकारीः प्रभात मिश्र "सुमन", प्रथम संस्करण, पृष्ठ संख्या 45; प्रभात प्रकाशन प्रा. लि., 4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002, ISBN: 978-93-5521-504-8.
3. पलामू के क्रांतिकारीः प्रभात मिश्र "सुमन", प्रथम संस्करण, पृष्ठ संख्या 206-208; प्रभात प्रकाशन प्रा. लि., 4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002, ISBN: 978-93-5521-504-8.
4. संदर्भः अंगरेज़ी-हिन्दी-शब्दकोश- फादर कामिल बुल्के (संदर्भः रचनाकार परिचर्चा).
5. संदर्भः छायावादयुगीन कविता पुस्तक समीक्षा- डॉ० कुमार वीरेन्द्र, दिशा इं प. हाउस, शाहदरा, दिल्ली-110032 (संदर्भः रचनाकार परिचर्चा).
6. संवेदः सरोजिनी साहू , मई 2012, पृष्ठ संख्या 56- 57, ISSN-2231-3885.
7. प्रभात खबरः रांची, पलामू; 08.07.2016, पृ० सं० -9, साहित्य सोपानः प्रभात खबर, 15 पी, इंडस्ट्रियल एरिया, कोकर, रांची-834001.
8. कही ईसुरी फागः मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ सं०-63, दू०आ०-2011, राजकमल प्रकाशन,1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरिया गंज, नई दिल्ली-02, भारत, ISBN: 978-81-267-1122-2.
9. कही ईसुरी फागः मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ सं०-257, दू०आ०-2011, राजकमल प्रकाशन, 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरिया गंज, नई दिल्ली-02, भारत, ISBN: 978-81-267-1122-2.